महिला की सबलता के मापदण्ड

मधु झुनझुनवाला

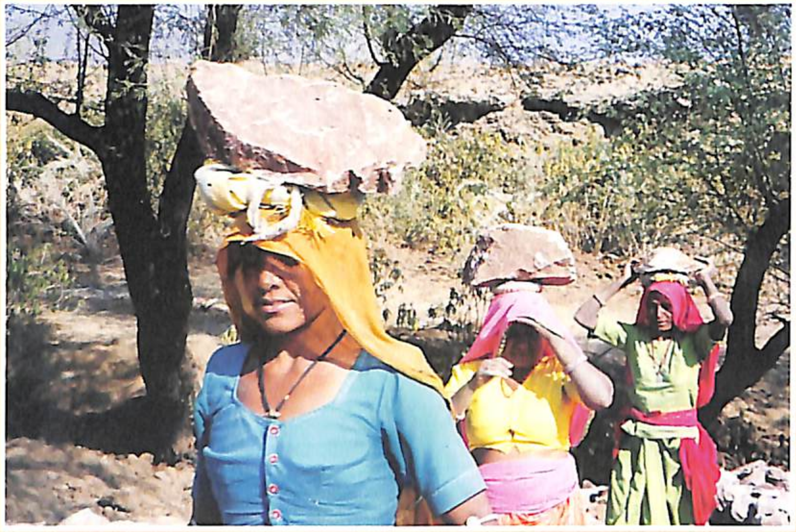

महिला की सबलता के मापदण्ड

मधु झुनझुनवाला

तरुण भारत संघ
भीकमपुरा किशोरी,
अलवर, राजस्थान

मानव जाति को कायम रखने में महिला का विशेष योगदान है। विकास के इस दौर में मनुष्य ने बहुत तरक्की की है और तकनीकी विकास ने महिलाओं के कठिन से कठिन कार्यों को सरल बनाया है। तकनीक के इस युग में एक विचार उठा है, कि महिलाओं का सबलीकरण होना चाहिए। यह महिलाओं का सौभाग्य है कि समाज उनका सबलीकरण करे। लेकिन समाज को इस बात को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि महिला कहां अबला है ? भारतीय संस्कृति में महिला को बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है उसे देवी, भगवती, शक्ति आदि नामों से नवाजा गया है और उसे ऊंचा स्थान देते हुए कहा गया है कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।" बावजूद इसके वह अबला है।

हमें सर्वप्रथम इस बात की जानकारी हासिल करनी होगी कि वास्तव में अबला और सबला में भेद क्या है और वह अबला क्यों है और हम उसे कैसे सबला बना सकते है ?

अबला वह है जो साधनों से पूर्ण नहीं है और सबला वह है जो साधनों से पूर्ण है। अबला वह है जो धन-धान्य युक्त नहीं है, सबल वह है जो धन-धान्य से युक्त है। यदि महिला के घर में खाने-पीने को नहीं है तो वह हर समय दुःखी और असुरक्षित रहती है। वह चिन्तन करती रहती है कि बच्चों को क्या खिलायेगी, मेहमान को क्या खिलायेगी ? लेकिन यदि उसका घर भोज्य सामग्री से भरपूर है तो निश्चिन्त है कि वह बच्चों एवं मेहमानों को भोजन-पानी दे सकेगी। किसी के पधारने पर वह स्वयं को अबला नहीं महसूस करेगी और उसे इस बात का मलाल नहीं होगा कि उसके पास आगन्तुक को खिलाने के लिए कुछ भी नहीं है। बल्कि वह एक सबला महिला की भूमिका अदा करेगी जिसका घर धन-धान्य पूर्ण है और अतिथि सत्कार करके आनन्दित होगी।

अतएव यदि समाज महिला को सबला बनाना चाहता है तो उसे धन-धान्य पूर्ण करना होगा। अब प्रश्न उठता है कि महिला कब धन-धान्य पूर्ण होगी ? साधारण-सा जवाब है जब उसकी खेती सबल होगी, खेत में अच्छी उपज ही एक महिला को सबल बना सकती है। समाज को चाहिए कि वह महिला के खेतों पर, खाद, बीज एवं पानी की व्यवस्था करे ताकि उसके घर अनाज आये और इसके साथ ही उसके घरों तक पानी और बिजली दे ताकि इस अनाज का वह सर्वोत्तम प्रयोग कर सके।

यह देखा गया है कि घरेलू कार्यों के लिए पानी की सबसे ज्यादा जरूरत है। एक मनुष्य को रोजमर्रा के कार्यों के लिए पानी की जरूरत होती है। प्रातः उठते ही शौच, मंजन, स्नान इत्यादि के लिए वह पानी की ओर उन्मुख होता है। चूंकि महिला घर की साम्राज्ञी होती है, अतः परिवार के सभी सदस्यों को पानी की सुविधा उपलब्ध कराना उसकी नैतिक जिम्मेदारी हो जाती है। इसके लिए वह नदी, नालों, कुओं, तालाबों से पानी ढोकर घर तक लाती है। पानी के अभाव में महिला की स्थिति उस मछली जैसी हो जाती है कि जो अथाह जल से निकाल कर बाहर रख दी जाती है।

वर्तमान में समाज अपनी ताकत काफी लगा रहा है। महिला सबलीकरण करने के लिए अनेक नियम कानून बनाने में लगा है। वह इस बात को नहीं समझ पा रहा है, कि वास्तव में महिला को कहां राहत दी जाये। महिला को छोटी-छोटी सुविधा चाहिए न कि ऊंचे-ऊंचे नियम कानून। इस संदर्भ में यही कहा जा सकता है, कि जहां काम आवे सुई, का करिहै तलवार। यदि महिला को पानी की प्यास लगी है तो उसे पानी पिलाने के स्थान पर एयरकन्डीशन सिनेमा हॉल या संसद भवन में बैठा देने से उसकी पानी की प्यास नहीं बुझेगी। वह तो पानी से ही बुझेगी। ठीक उसी तरह जैसे फटे कपड़े की सिलाई सुई से ही की जाती है तलवार से नहीं। समाज को चाहिए कि महिला को

उसकी जरूरत की बुनियादी सुविधायें उपलबध कराकर सबल बनाये न कि उनके अभाव को बरकरार रखते हुए ऊंचे ओहदे देकर। महिला को सबला बनाने के लिए बड़े महल, ऊंची नौकरी, बड़ी पदवी अथवा राजनीतिक आरक्षण की जरूरत नहीं है उसे तो जीवन की मूलभूत सुविधायें मिल जायें तभी वह सबला बन जाती है। वह भली प्रकार जानती है कि आर्थिक और राजनीतिक सबलता की कोई कीमत नहीं है। अगर खाने के लिए रोटी और पीने के लिए पानी न हो तो सब बेकार है। अतः यदि हमारे देश की महिला को बलशाली बनाना है तो सबसे पहले उसे घरेलू मूलभूत सविधायें प्रदान करनी होगी। यदि वह घर पर तृप्त होगी तो घर के बाहर भी उन्नति करेगी और यदि घर में ही उलझी रहेगी तो बाहरी सशक्तिकरण मात्र ऊपरी दिखावा ही होगा। महिला को मिलने वाली मूलभूत सुविधाओं में से एक है पानी। मानव शरीर का निर्माण जिन पांच तत्त्वों से बना है उनमें से एक है जल। इसके बिना व्यक्ति तो क्या पेड़-पौधे, पशु-पक्षी भी जीवित नहीं रह सकते हैं। फिर महिला की क्या औकात।

महिला के जीवन को गति देता : पानी

भगवान शिव ने अपनी जटा से गंगा बहाई थी क्योंकि माँ पर्वतीजी को बहुत प्यास लगी थी और वे उनकी उस दयनीय अवस्था से द्रवित हो गये थे। वास्तव में पानी की उपयोगिता उसी दिन सिद्ध हो गयी थी जिस दिन सर्वदृष्टा ने सृष्टि का सृजन किया था। उसने पेड़, पौधे, पशु-पक्षी और मनुष्यों को पृथ्वी पर भेजने के साथ-साथ पानी भी भेजा। नदी, नाले, झरने, तालाब, वर्ष सब प्रकृति की देन है। मनुष्य ने जब से जन्म लिया है उसने पानी को तभी से देखा है और उससे अपनी प्यास बुझायी है। माँ के गर्भ में भी बच्चा पानी में रहता है। विदेशों में नवजात शिशु को कुछ समय पानी में इसलिये छोड़ दिया जाता है ताकि वह जन्म के बाद भी पहले जैसा

महसूस करे और धीर-धीरे नई परिस्थिति से आत्मसात करे। पूर्व में पानी के कृत्रिम साधन नहीं थे और हाँ-जहाँ प्राकृतिक पानी था वहीं मनुष्यों की बस्ती थी। लेकिन धीर-धीरे विकास के साथ-साथ मनुष्य ने पानी को जन-जन तक पहुंचा कर इस कहावत को झूठा साबित करने का प्रयास किया है कि प्यासा पानी के पास जाता है कि पानी प्यासे के पास। आज शहरों में घर-घर में टूंटी लगी है। शहरवासियों को पानी के लिये नदी, नाले, तालाब और कुओं पर नहीं जाना पड़ता है। तकनीकी विकास ने पानी को घर तक पहुंचा दिया है। परिणामस्वरूप शहरवासी आनन्दमय जीवन जीते हैं। शहर की महिलायें अपने घरों में पानी की सप्लाई से बहुत खुश हैं उनके जीवन में एक गति है, उनके कार्यों में फुर्ती है उन्हें एक गिलस पीने के पानी की उपलब्धि तुरन्त फिल्टर का स्विच दबाते ही हो जाती है। लेकिन एक दिन की वाटर सप्लाई बन्द होने पर उन लोगों को नानी-दादी याद आ जाती है जब उन्हें बूंद-बूंद पानी को रोना होता है, चम्मच-चम्मच पानी को बचाना होता है और उनके जीवन की गति ही गायब हो जाता है। जो मां शान से सज-संवर कर सवेरे ऑफिस जाने को तैयार हो जाती थी बाल्टी लेकर दौड़ती नजर आती है, जिसके बच्चे रोज धुले हुए कपड़े पहन कर स्कूल जाते थे वह उन्हें मैले कपड़े पहनाने को मजबूर हो जाती है, जिस घर में कई व्यंजन प्रतिदिन पकते थे उस घर में उनकी संख्या घटा दी जाती है अथवा लोग होटलों में खाने जाते हैं ! कहने का तात्पर्य यह है कि पानी के बिना महिला के जीवन की लय टूट जाती है।

जन चेतना और जोहड़ निर्माण

भारत वर्ष घनी आबादी वाला विशाल देश है। यहां के लोगों का मुख्य पेशा खेती है। आधी से अधिक जनसंखया गांवों में रहकर खेतों के सहारे अपना जीवन यापन करती है। इस देश में प्राकृतिक सम्पदा से सम्पन्न प्रदेश जैसे उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, पंजाब है तो प्राकृतिक सम्पदा से गरीब प्रदेश

जैसे राजस्थान जैसा मरुस्थल भी है। इस प्रदेश में पानी का बहुत अभाव है। यहां की महिलाओं को बूंद-बूंद पानी के लिए कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उनकी दिनचर्या का आधा समय केवल पानी की व्यवस्था में खत्म हो जाता है। परिणामस्वरूप अपने परिवार पर कम ध्यान दे पाती है और रोटी-पानी के अलावा कृषि कार्यों में हाथ बटाने में कठिनाई महसूस करती है। इन महिलाओं को पानी से राहत देने का कार्य किया है तरुण भारत संघ ने।

तरुण भारत संघ ने इस इलाके में यह चेतना पैदा की कि जो भी पानी हमें प्रकृति बरसात के माध्यम से देती है उसका एक भी बूंद बहकर बर्बाद न होने दिया जाय बल्कि उसका भण्डारण कर लिया जाय। पानी का भण्डारण करना बड़ी अजीब सी बात लगती है। कितने बर्तन भरेंगी महिलायें और उनका भरा हुआ पानी कितने दिन चलेगा ? तरुण भारत संघ के पानी के भण्डारण की बात सुनकर वे स्तब्ध थी। संघ ने गांव वालों को समझाया कि पानी का भण्डारण कैसे किया जा सकता है और करके दिखाया। जोहड़ के माध्यम से। संघ ने महिलाओं का भ्रम तोड़ दिया कि पानी का भण्डारण नहीं हो सकता है।

उन्होंने गांव वालों को प्रेरित किया कि आप आगे-आगे चलें हम आपके पीछ-पीछे चलेंगे और दोनों मिल कर पानी को बहने से बचायें। गांव वालों के सहयोग से अनेकानेक नये जोहड़ों एवं बन्धों का निर्माण किया गया। पुराने तालाबों, जोहड़ों एवं बन्धों की मरम्मत की गई धूप और बालू से तपे हुये लोगों में जोश की कमी न थी महिला, पुरुष, बूढ़े-जवान सबने पानी के इस काम में हिस्सा लिया। ग्रामीणों में उत्साह और लगन की कमी न होने के कारण संघ को उनका भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ। पूरे क्षेत्र में पानी की उपलब्धता बढ़ गई। कुएं का जल स्तर ऊंचा उठ गया। डीजल पम्प चलने लगे। पूरे क्षेत्र में समृद्धि फैली।

संस्था के कार्यों का महिलाओं के जीवन पर प्रभाव

चूंकि पानी महिलाओं की दिनचर्या का एक अहम हिस्सा है अतः हमने कई गांवों का भ्रमण करके यह जानने का प्रयास किया कि तरुण भारत संघ के कार्यों का महिलाओं के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है ?

जहां कहीं भी हम गये कुछने दबी जुबान से तो कुछ ने खुलकर संघ के कार्यों को सराहा है। भले ही वह व्यक्तिगत रूप से लाभान्वित न हुआ हो किन्तु पूरे समाज और गांव को लाभ हुआ है इस बात को वे स्वीकार करते हैं।

इस क्षेत्र में छोटी-छोटी आबादी वाले कस्बेनुमा गांव देखने को मिले। पुरुषों के चेहरे पर आत्मसन्तोष का भाव, बच्चों में पढ़ाई के प्रति रुचि और महिलाओं में खेती पशुपालन और गलीचा बुनने से घर में आयी आय से खुशी की झलक साफ दिखाई देती है। जिन गांवों का हमने भ्रमण किया वे थे मालूताना, गोपालपुर, थानागाजी, किशोरी, सूरतगढ़, मालियों की ढाणी तथा बंजारों की ढाणी। बंजारों की ढाणी को छोड़कर अन्य सभी जगह संघ ने कार्य किया था और खुशहाली थी। सभी गांवों के भ्रमण के बाद अन्त में हम बंजारों की ढाणी गये। वहां की महिलाओं का हृदय विदारक दृश्य देखकर हम इस मर्म को समझ सके कि वास्तव में पानी का अकाल क्या होता है और त.भा.सं. के कार्य के पहले उपरोक्त अन्य गांवों की भी क्या दशा रही होगी।

गांव की महिलाओं से बातचीत के दौरान पता चला कि आज इस सूखे की अवधि में भी वे खुशहाल हैं। पिछले 100 से भी अधिक वर्षों से चले आ रहे अकाल को भी वे आज लगभग भूल गयी हैं। जबकि

इनके परिवार के वृद्ध स्त्री-पुरुषों की आंखों के सामने पिछला सूखे का दृश्य नाचता रहता है। जब वे दोनों समय की तुलना करते हैं तो पिछले दिनों को याद करके उनकी आंखें भर जाती हैं। वे इस बात का जिक्र करते हैं कि आज के बच्चों को तो इस बात का आभास भी नहीं है कि सूखा या पानी का अकाल क्या होता है "टाबरां न तो बेरो कोनी में कइयां रहया हां"। दरअसल आज हम विकास की चरम सीमा पर पहुंचने वाले हैं, दिनचर्या इतनी गतिशील हो गयी है कि जीने के लिए आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धता तत्काल हो जाती है। यदि यह न हो तो विश्व की दौड़ में चल पाना भी अति दुष्कर होगा। अतः आज के बच्चे पिछले पानी के अकाल का अंदाज भी नहीं लगा सकते हैं क्योंकि उन्हें यह सहज ही प्राप्त है। दो घण्टे इंजन चलने से पानी कम हो जाता है और चार-पांच घण्टे बाद फिर बढ़ जाता है। 10 वर्ष पहले हमें पूर्णतया बारिश पर ही निर्भर रहना था लेकिन आज हमें इससे आराम हुआ। इस आराम का कारण यह है कि बारिश का पानी अब बहकर बर्बाद नहीं होता है बल्कि बन्धों में इकट्ठा हो जाता है और यही रिस-रिस कर धरती में चला जाता है। जो कुओं में पानी का स्तर ऊंचा करता है। पहले ऐसा न था कुएं तो थे लेकिन बांध न थे फलस्वरूप बारिश का पानी निरंकुश बहकर बर्बाद हो जाता था और गर्मियों में या बारिस न होने पर कुएं सूख जाते थे, बूंद-बूंद पानी को तरसना पड़ता था। ये बांध उसके लिए बरदान साबित हुये हैं। इनकी उपयोगिता का बखान करना बहुत मुश्किल है।

वर्तमान में उसका पति महादेव जयपुर में बेलदारी का काम करता है, बेटा दुकान करता है। उनकी दो जवान बेटियां गलीचा बुनने का काम करती हैं और वह स्वयं खेती का काम देख लेती है। पहले स्थिति बिल्कुल विपरीत थी। पहले जब चरस से पानी सींचते थे तो पूरा परिवार खेत पर ड्यूटी करता था। हमें बैल को हांकना, नालियों में पानी पटाना और मेड़बन्दी करना

पड़ता था। सुबह से शाम तक हम सब मिल-जुलकर खेत में पानी डालते थे, बेलदारी और दुकान के लिये समय नहीं बचता था, लेकिन बंधों ने हमारा काम भी आसान बनाया है और परिवार के सदस्यों को खेती से छुट्टी दिला दी है। अब पूरे दिन बैल और चरस का इन्तजाम नहीं करना पड़ता है। एक-दो ही घण्टे में पूरा पानी आ जाता है और इतना भरपूर पानी आता है कि पूरे दिन का काम 2 घण्टे में ही पूरा हो जाता है। एक ओर डीजल पम्प चलता रहता है, खेत में पानी पटता रहता है तो दूसरी ओर हम कुएं पर ही कपड़े धोने और सभी घरेलू कार्यों के लिए पानी के मटके सर पर ढोकर ले जाने पड़ते थे। अब केवल भोजन पानी के लिए ही ढोना पड़ता है। इस वर्ष खेती कुछ कम हुई है, क्योंकि पानी की समस्या है। बारिश भी नहीं हुई है लेकिन हम खुशहाल हैं। यदि ये बांध न होते तो हम सब इस सूखे में इतन पानी भी नहीं दे पाते और खेती पूरी तरह चौपट हो जाती। सूखे में ये बंधें बरदान सिद्ध हुये हैं। घीसी की बेटी बार-बार इस बात को दोहराती है कि उसके लिये पानी बहुत जरूरी है वह पानी के बिना नहीं रह सकती। इतना ही नहीं यदि इस गांव में पानी खत्म हो जायेगा तो वह गांव छोड़कर जाने को तैयार है वह कहती है "जहां पानी है मैं वहीं चली जाऊंगी बिना पानी के नहीं रह सकती हूं"। वह पानी की कमी से पहले ही बहुत आहत हो चुकी है। आज वह गलीचा बुनकर खुश है कम से कम 2-4 पैसा तो मिलता है। इस पीढ़ी के बच्चों क लिए पानी उपलब्ध कराकर तरुण भारत संघ ने उनके जीवन में इतनी गति ला दी है कि वे पानी के अकाल को स्वीकार करने को तैयार नहीं है।

सूरतगढ़ की मन्नी देवी बृद्ध महिला हैं तो रैगर किन्तु देखने में सभ्रान्त लगती हैं। उनके बेटे पोते हैं और सभी बेहद खुशहाल। घर में दो जवान बेटियां हैं। अनीता की शादी हो गई है मुकलावा बाकी है। शान्ता 8वीं पास है विवाह नहीं हुआ है वह आगे पढ़ना नहीं चाहती। दोनों बहने बड़ी ही खुश एवं स्वस्थ हैं। उनके लिये घर में ही करधा

लगा हुआ है और वे गलीचा बुनने का काम करती हैं। मन्नी देवी बताती हैं कि आज घर-घर में लूम लग गये हैं। 40-50 वर्ष का बूढ़ा भी गलीचा बनाने लगा है। खेती में काम कम होने की बजह से सबको कुछ न कुछ समय रोजगार के लिये मिल जाता है। उन्होंने 35 वर्ष पूर्व गांव वालों की मदद से अपना कुआं खोदा था जो सूखा तो कभी भी नहीं, लेकिन पानी का स्तर पहुत नीचा हो जाता था और पानी निकालने में काफी मेहनत होती थी। परिवार में एक दहशत बनी रहती थी कि यह कभी भी सूख जायेगा और उन्हें पानी के लिए मोहताज होना पड़ेगा, लेकिन इस बार उसमें पानी का स्तर ज्यादा नीचा नहीं हो पाया और उन्हें इस बात का डर भी नहीं लगा कि सूख जायेगा। सूखे में भी राहत मिली है। न ही हमारी खेती सूखी है और न ही हमें पानी के लिये हाय-हाय करना पड़ रहा है, बल्कि पहले की तरह ही हमारा जीवन सुखमय कट रहा है। आज तो पता भी नहीं चलता कि यहां सूखा पड़ा है। ये बंधे न होते तो हमें इन दिनों भयंकर कठिनाई का सामना करना पड़ता, हमारे रोगार छूट जाते और पूरा परिवार पानी की व्यवस्था में लग जाता, अभी ऐसा कुछ नहीं है। बच्चे आराम से पढ़ने जाते हैं, लड़कियां गलीचा बुनती हैं, मैं घरेलू कार्य करती हूं, मेरा घरवाला खेती कर लेता है और बेटा मजदूरी कर लेता है। पानी और बिजली की उपलब्धि उन्हें बहुत सकून दे रही थी। हां उन्हें अपने कुएं का सुख तो था लेकिन अकाल की अवधि में पानी इतना कम हो जाता था कि वे अपना कुआं होते हुये भी बूंद-बूंद पानी के लिये व्याकुल हो जाती थी। खेती का तो सवाल ही नहीं था। लेकिन हाल में पड़े इस अकाल में उनकी स्थिति काफी बेहतर है। उनके कुएं में पानी मौजूद है जो अप्रत्यशित है। वे बार-बार संघ वालों का धन्यवाद करती हैं, उन्होंने बांध बनाकर बरसाती पानी एकत्रित करने की योजना लागू की है। वे इस बात का दावा करती हैं कि अकेले वे ही इसका लाभ नहीं उठा रही हैं बल्कि पूरा गांव इस लाभ को उठा रहा है।

वे कहती हैं कि पहले हम सवेरे भोर में उठकर आटा पीसते थे, क्योंकि दिन में खेत पर जाना होता था। अब तो बिजली की चक्की पर आटा पिसा लेते हैं और सवेरे हमें भी सबकी तरह आराम से सोने का समय मिल जाता है। हमें बिजली, पानी दोनों का आराम हो गया है। अपने खेती का जिक्र करते हुये कहती हैं कि हमारे यहां पहले 8 आदमी लगते थे अब तो एक से ही काम चल जाता है, क्योंकि बंधों में पानी के जमाव के पहले कुएं सूख जाते थे इसलिये खेतों में पानी डालने का काम सीमित समय तक होता था। इसलिये परिवार के सभी सदस्य मिल-जुलकर चरस से पानी पटाते थे और पूरे एक दिन में भी एक खेत की सिंचाई नहीं हो पाती थी। लेकिन जबसे पानी का आरम हो गया है और कुएं में पानी का स्तर बढ़ा है, हमने अपने कुएं पर डीजल इंजन लगवा लिया है। इसका एक सबसे बढ़ा लाभ यह हुआ है, कि अब पानी पटाने के लिये पूरे परिवार को नहीं लगना पड़ता है, जितना काम चरस से 2-3 दिन में होता था वह अब दो घण्टे में होने लगा है। इंजन से पानी पटाने में भी ज्यादा लोगों की आवश्यकता नहीं है एक ही काफी है। बच्चे सब पढ़ने लगे हैं, आदमी सब कमाने लगे हैं। घर में सम्पन्नता आई है, लेकिन इस कमाई का एक और असर उन्हें दिखाई देता है, कि खर्च भी बढ़े हैं। वे कहती हैं पहले तो छोटी-मोटी बीमारियों का इलाज घर पर ही हो जाता था, लेकिन अब तो अस्पताल जाना पड़ता है। पहले सोंठ से काम चल जाता था, अब 100 रु. की सुई से भी आराम नहीं होता है। सबको जल्दी आराम चाहिये, क्योंकि मजदूरी करनी है, घरेलू इलाज बहुत समय लेता है। पैसा है तभी सुई लेते हैं। तात्पर्य यह कि कमाई बढ़ी है और काम का उत्साह भी बढ़ा है। उनमें गति और चेतना आयी है।

महिलाओं के जीवन में पानी का प्रत्यक्ष प्रभाव तो पड़ता ही है किन्तु इसके परोक्ष प्रभाव को भी नकारा नहीं जा सकता। जैसे आज

महिलाओं को मिलने वाला इंधन भी पानी की ही देन है न पानी होगा न जंगल होंगे, न खेती, न बूसा, न पशु को पीने का पानी मिलेगा, न खाने को चारा और न ही महिलाओं को परिवार के लिये दूध और खेती के लिये बैल। गांवों की गोचर भूमि पशुओं के लिये बहुत महत्त्व रखती है और लाचार महिला को ताकत प्रदान करती है। जंगल की समृद्धि ने महिलाओं को पशुओं को लिए चारा और जलाने की लकड़ी उपलब्ध कराई है। महिलाएं इन जंगलों की निगरानी करती हैं और मोटी लकड़ी ले जाने वालों को रोकती हैं। संघ ने जगह-जगह पशुओं की पीने के लिए पानी कुण्ड बनाये हैं, जिनमें पानी भरा रहता है और पशु पीते हैं।

तरुण भारत संघ के पानी के प्रयास ने समृद्ध जंगल बनाये हैं। पशुओं को पीने का पानी उपलब्ध कराया है। इस संघ की सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि संघ जो भी काम करता है वह गांव वालों की आम सहमति से ही करता है, अकेला नहीं। इसका परिणाम यह है, कि गांव वाले भी उनका साथ देते हैं, बांध बनाने के कार्य में गांव वाले श्रमदान करते हैं, महिलाएं सक्रीय भूमिका निभाती हैं और स्वयं ही जंगल तथा बंधों की निगरानी भी करती हैं। यदि कोई इन्हें नुकसान पहुंचाने की कोशिश करता है तो वे शोर मचाती हैं। इतना ही नहीं बंधों के दो बार टूटने पर गांव वालों ने अपनी मेहनत से इन्हें बनाया। जो इस बात की सूचना देता है कि गांव में बांधों के प्रति वहां के लोगों में आस्था है। वे इस बात को समझ रहे हैं, कि इस सूखे में भी कुएं और बरमें में जो पानी है वह तरुण भारत संघ की देन है। संघ यदि बांध, जोहड़ न बनाता तो जो थोड़ा बहुत पानी बरसा था वह लावारिस बह गया होता और हम सब प्यासे ही रह जाते। अब यदि थोड़ी भी बारिश हो जायेगी तो वह सब बांधों के माध्यम से जमीन में जाकर कुआं और बरमों के पानी के जल स्तर को कायम रखेगी। हम अकाल से बच जायेंगे।

आज गांवों में पानी की उपलब्धि हो जाने से महिला खुशहाल हुई है उनके पास समय बच गया है। उन्होंने परिवार के स्वास्थ पर ध्यान देना शुरू कर दिया है, घरों में साफ-सफाई बढ़ाई है। बच्चों के कपड़े-लत्ते धुलने लगे हैं, सब लोग रोज नहाने लगे हैं। बच्चों की छोटी-मोटी बीमारियों पर भी मातायें ध्यान देने लगी हैं। घरेलू दवा के साथ-साथ उन्हें डाक्टर के पास भी ले जाने लगी हैं। पानी की उपलब्धि का एक बहुत बड़ा लाभ महिला को यह मिला है कि उसके लिये शोच जाने का प्रबन्ध घर में हो गया है। महिला अपने जीवन में अनेक शारीरिक अवस्थाओं से गुजरती है, जैसे गर्भ धारण, मासिक धर्म इत्यादि। ऐसे नाजुक समय में भी उसे शोच के लिये खेतों में जाना पड़ता था। उसे किसी भी प्रकार की दुर्घटना होने का भय बना रहता था। इसके अलावा सामान्य दिनों में भी उन्हें सवेरे जब सारा गांव सो रहा होता था तभी उठ कर खेतों में जाना पड़ता था और यदि कभी दिन में शौच की इच्छा हो जाये तो उन्हें कठिनाई का सामना करना पड़ता था। लेकिन अब वे अपनी सहूलियत से शौच के लिये जाती है, सवेरे जल्दी उठने का उन पर कोई दबाव नहीं रहता है। इसका उन्हें एक और लाभ यह मिला है कि उनके स्वास्थ में सुधार हुआ है, क्योंकि इसे रोकने पर उन्हें अनेक बीमारियों का सामना करना पड़ता था। शौचालयों का इस्तेमाल मुख्यतः घर की औरतें ही करती हैं। महिलाओं को शौचालय की सफाई के लिये ज्यादा पानी भरकर लाना पड़ता है, उनके लिये पानी भरने का काम तो बढ़ा है लेकिन वे खुश हैं, क्योंकि पानी की बदौलत उन्हें शौच जाने की असुविधाओं से मुक्ति मिली है। भले ही पानी भरने की मेहनत बढ़ी है वे इसका बुरा नहीं मानतीं कि उन्हें इसके लिये पानी लाना होता है। उनके लिये पानी भरकर लना उतना कष्टकर नहीं है जितना कि खेतों में शौच के लिए जाना। जहां कहीं भी शौच की सुविधा है वह केवल महिलाओं के लिए ही है। पुरुष तो अभी भी खेतों में ही जाते हैं ताकि महिलाओं को ज्यादा पानी न ढोना पड़े। पुरुष महिलाओं की इस मुसीबत को समझते है !

परम्पराओं में विश्वास

महिलाएं अपने को धन्य मानती हैं पानी पाकर। वे स्वीकार करती हैं कि हमें हाथ से खींचकर पानी का प्रयोग करना पड़ता है लेकिन पानी तो है। पानी के बिना तो वे भी तड़पती मछली ही हैं। वे पानी को अपना ईष्ट देव मानती हैं। वरुण देवता में विश्वास रखती हैं अतः वे वरुण देवता से प्रार्थना करती हैं कि वे बारिश करें और उनका घर धन-धान्य से पूर्ण हो। इसके लिये वे मनौतियां मनाती हैं। सदियों से चले आ रहे परम्परागत परिवेश को वे भगवान की देन मानती हैं, यदि उनमें मनुष्य अपनी इच्छा से बदलाव लाता है तो उसके लिए उसे प्रकृतिक सजा भुगतनी पड़ती है। वर्तमान में पड़े सूखे को भी वे समाज की देन मानती हैं। चूंकि विवाह से पूर्व लड़के-लड़की का सम्बन्ध बनाना समाज में वर्जित है और गांव की कई लड़कियों ने बिना ब्याहे ही बच्चे पैदा किए हैं, जिसकी सजा सूखे के रूप में पूरा गांव भुगत रहा है। इस सूखे से निपटने के लिए वे सुझाव देती हैं कि इस तरह के सामाजिक दुराचार को मिटाना होगा और देवी-देवता को मनाना होगा, उनकी पूजा-अर्चना करनी होगी तभी बरसात होगी और तभी बरसात का पानी बंधे और जोहड़ तक पहुंचेगा अन्यथा बंधे और जोहड़ का कोई मतलब नहीं है। यदि बंधों को कामयाब बनाना है तो अपने रीति-रिवाज और परम्पराओं को कायम रखना होगा। दैविक प्रकोप से बचना होगा, वरुण देवता को मनाना होगा।

महिला वर्षा की उपलब्धि को प्रभु की इच्छा मानती हैं यदि प्रभु की मेहरबानी से वर्षा हुई तो जोहड़ और बंधों से उन्हें अवश्य ही आराम होगा और यदि नहीं की तो उसके लिए ये सब बेकार हैं। उनका मानना है कि जोहड़ और बंधों को सफल बनाना है और घर-घर में पानी पहुंचाना है तो सामाजिक व्यवस्था को भी सुदृढ़ बनाना होगा, लोगों की आन्तरिक इच्छा को जानना होगा, कि वे क्या चाहते हैं ? परम्परागत रीति-रिवाजों पर

अमल करना होगा। इसके लिए गांव में बच्चों और बड़ों को शिक्षा देनी होगी, उन्हें दैविक प्रकोप के वास्तविक कारणों से अवगत कराना होगा। वर्तमान में हुई वैज्ञानिक खोजों के दुष्प्रभाव को भी वे अपनी अन्तदृष्टि से देखती हैं। वे गांव में स्वावलम्बन और सहयोग की तस्वीर खोजती हैं। उनका मानना है कि यदि हमें पानी दूर से लाना होता है तो क्या हुआ, अगर सभी साधन घर में आ जायेंगे। अब तो खेतों पर भी काम इतना नहीं रहा, इंजन से पानी, ट्रेक्टर से खेती होती है। आज हम जो अनाज खाते हैं वे भी यूरिया की ताकत पर पैदा होते हैं, अतः उनमें अपनी ताकत तो है ही नहीं, इसलिये हम पहले ही कमजोर हैं और यदि थोड़ी-बहुत मेहनत यानि पानी भी कुएं से नहीं लायेंगे तो आदत बिल्कुल छूट जायेगी और जरूरत पड़ने पर हम कुछ भी करने के योग्य नहीं रहेंगे। तात्पर्य यह है कि विज्ञान उन्हें कमजोर बना ही रहा है तो कम-से-कम कुछ तो शारीरिक मेहनत करें।

इन महिलाओं में स्वच्छन्ता है वे घर में टूंटी लगाकर उसकी परतन्त्रता नहीं चाहती हैं। तात्पर्य यह कि टूंटी में पानी अपने समय पर आयेगा और बन्द हो जायेगा, जबकि कुएं पर 24 घण्टे पानी की सप्लाई बनी रहेगी। उन्हें अपनी दिनचर्या टूंटी के अनुकूल निर्धारित करन ीहोगी जो उनके लिए एक बन्धन है। वर्तमान में वे पनी मर्जी के अनुसार कुएं पर जाती हैं। यह उनके लिए घर से बाहर निकलने का उपाय और मनोरंजन का एक साधन है। इस समय वे अपनी सखियों के साथ अपने सुख-दुःख बांटती हैं, सलाह-मश्विरा करती हैं। उन्होंने वस्तु विनिमय प्रथा को अभी तक कायम रखा है। अपने घर की वस्तुओं का आदान-प्रदान अपनी इच्छा से स्वतन्त्रतापूर्वक करती हैं। यदि इन्हें बाजरे की खिचड़ी खानी है और घर में बाजरा नहीं है और पैसा भी नहीं है तब भी ये परेशान नहीं होतीं। अपने घर से गेहूं पड़ोसन को दे देती हैं और बदले में बाजरा ले लेती हैं और शान से बाजरे की खिचड़ी बनाकर खाती-खिलाती हैं, इन्हें इस बात का दुःख तनिक भी नहीं सताता कि इनके पास पैसा नहीं है। इस प्रथा को वास्तव

में महिलाओं ने ही कायम रखा है। ये महिलाएं समाज की रीढ़ हैं। ये स्वयं को परिस्थिति के अनुकूल ढाल लेने में सक्षम हैं।

गोपालपुरा

प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण लहलहाते खेत छोटी आबादी वाले गांव गोपालपुर की छटा में चार चांद लगाते हैं। पशुओं के रम्भाने की आवाज भी सुनाई देती हैं। लोगों के तनाव-मुक्त चेहरे इस बात का आभास कराते हैं कि उनका किसी बात का असन्तोष नहीं है वे सही राह-चल रहे हैं। अधिकांश ग्रामीण महिला और पुरुष दोनों ही सौम्य और सन्तुष्ट प्रतीत होते हैं। गोपी बच्चों को स्कूल भेजकर सुखपूर्वक निश्चिंत बैठकर धूप सेंक रही हैं। गजब का आत्मसन्तोष है उसके चेहरे पर, 2 वर्ष की रेखा उसकी जेठानी की बेटी, उसके पास खड़ी है और एक छोटी बच्ची उसकी गोद में लेटी-लेटी दूध पी रही है। देखने में भोली-भाली गोपी को गांव की पूरी जानकारी है। वह सक्षम है, सब कुछ बताने में। उसके जेठ कुशल खेतिहर हैं। उनके अनुसार गांव में पिछले कुछ वर्षों में सम्पन्नता बहुत अधिक बढ़ी है और इस सूखे में भी उन्हें कठिनाई का अनुभव नहीं हुआ। सूखे से राहत दिलाने के लिए वे तरुण भारत संघ का धन्यवाद करते हैं और कहते हैं कि अब हम दो घण्टा इंजन चलाकर खेतों की सिंचाई कर लेते हैं। यह सब तरुण भारत संघ की ही देन है। इस समय 5 कुओं में तो एक बूंद भी पानी नहीं रहता था, लेकिन इस बार दो घण्टे तो पानी मिल ही जाता है। हर 4-5 घण्टे के अन्तराल के बाद पुनः 2 घण्टे पानी मिल जाता है।

दरअसल तरुण भारत संघ ने पानी बचाओ अभियान छेड़ कर किसानों में आत्मविश्वास पैदा कर दिया है कि यदि किसान विवेक से काम लेंगे तो उन्हें अकाल की स्थिति में भी कुछ न कुछ पानी अवश्य मिल जायेगा। उनकी खेती, पशु और परिवार खुशहाल रह सकेंगे। संघ ने पानी की योजना कुछ इस

प्रकार की बनाई है कि बरसात का एक बूंद पानी भी बहकर बेकार न होने पाये। लालाराम कहते हैं कि संस्था के 5 जोहड़ हमेशा भरे रहते हैं, जिनमें उनके पशु पानी पीते हैं, यदि ये जोहड़ न होते तो इस अकाल में पशु पानी के बिना तड़प जाते। उनका घरवाली बीच में टोकती हैं कि "हमें तो इससे कोई आराम नहीं हुआ है"। वे पलट कर जवाब देते हैं "औरतें इन बातों को नहीं समझतीं, लेकिन आदमी समझते हैं।" और वे अपनी पत्नी से ही पूछते हैं कि तुम्हारे पास 8 पशु (2 बकरी, 6 भैंस) हैं वे कहां पानी पीते हैं ? पशुओं के लिए चारा-पत्ती कहां से लाती हो ? जवाब मिला जोहड़ से, जंगल से। वे सझाते हैं कि ये जोहड़ संघ ने ही बनाये हैं ये जंगल संघ ने ही लगवाये हैं। उन्होंने यह बाताया कि औरतें पत्ती, चारा, इंधन बटोरने का काम करती हैं, साथ में ही वे बरी लकड़ी भी पत्तियों के बीच दबा कर ले आती हैं। वे इस बात को नहीं समझ रही हैं, कि अगर पेड़ रहेंगे तभी पत्तियां भी रहेंगी और यदि पेड़ ही खत्म कर दिये जायेंगे तो पशुओं को खाने के लिये पत्तियां कहां से आयेंगी। इसके लिए गांव में पंचों ने यह खबर फैला दी है कि जिसकी घरवाली मोटी लकड़ी ले जाएगी, उसे जुर्माना देना होगा और इसकी निगरीनी मुश्तैदी से गांव वाले ही करते हैं। अब चारा लाने में औरतों की मनमानी नहीं चलती। गांव के पुरुष 'जंगल बचेगा तो हरा चाला मिलेगा" जैसी खबर गांव भर में फैलाते हैं। गांव के पुरुष इस बात को समझ रहे हैं कि संघ वाले जोहड़ बना सकते हैं, जंगल लगा सकते हैं, लेकिन रख-रखाव तो गांव के लोगों को ही करना होगा। इसलिए वे तरुण भारत के अभियान से जुड़कर चलते हैं। जोहड़ और जंगल के इसतेमाल पर लगे प्रतिबन्ध से महिलाएं थोड़ी खिन्न इसलिए रहती हैं, क्योंकि उनकी स्वच्छन्दता बाधित होती हैं। उन्हें गांव वालों के नियमों का पालन करना पड़ता है, अन्यथा उनके घरवालों को जुर्माना भरना पड़ता है और इसके लिए उन्हें घरवाले से डांट पड़ती है। गांव के किसान अपनी घरवालियों से सहयोग का आह्वान करते हैं। धीरे-धीरे महिलाओं में चेतना आयी है। वे स्वीकारने लगी हैं कि जंगल बचाना उनका काम है। जंगल बचेंगे तो वे खुशहाल होंगी।

गांव की सम्पन्नता का बखान करते हुए किसान कहते हैं, कि पानी की ओर से वे निश्चिंत हुए हैं और उन्होंने अपनी ताकत गांव की समृद्धि में लगाई है। वास्तव में खेती से अब उन्हें अच्छी आय हो रही है, पक्की सड़क बन गई है। अलवर, दौसा, भीखमपुरा के व्यापारी यहां आकर अनाज ले जाते हैं, पहले ऐसा नहीं था। खेती के लिए डीजल, बीज, खाद भी सर पर ढोकर लाना होता था, ऊंट पर लाना होता था, अब ट्रेक्टर पर ले आते हैं, समय और मेहनत दोनों बचती हैं। पहले बैल जोड़ी से खेती करते थे, दिन भर में 2 बीघा खेत जोतते थे, अब ट्रेक्टर से 10 बीघा खेत जोतते हैं। अब तो हमें खेत में औरतों की भी जरूरत पड़ती है, सब मिलकर खेत पर काम कर लेते हैं। किसान बताते हैं कि पहले औरतों को घर के काम से फुर्सत नहीं मिलती थी, लेकिन अब उनका काम कम हुआ है और समय बचा है। आटा चक्की पर बिजली से पिस्ता है, पक्का घर है, रोज लीपना पोतना नहीं है, एक बार पुताई करा दी कई वर्ष की छुट्टी, बच्चे स्कूल पढ़ने जाते हैं, चारे के लिए भटकना नहीं है, जंगल से पत्ते बटोर कर ले आओ, खेत पर इंजन चलते हैं, नहाना, कपड़ा धोना वहीं कर लेती हैं, पशुओं के लिए पानी के जोहड़ हैं, अब तो उन्हें पशुओं की सेवा दूध-दही, घी का ही काम है। इसलिए औरतें खेती के काम में पूरा सहयोग करती है। आज 10 बीघा खेत बोने के लिए हमें उनकी जरूरत पड़ती है। महिलाओं पर ही टिका है, हमारा पशुपालन व्यवसाय। घर की महिलाएं इनकी देख-रेख करती हैं। पशु हमारी पूंजी हैं। इनके दूध और घी से हमें अच्छी आय पैदा होती है, खेती की तुलना में पशुपालन ज्यादा लाभकारी है। क्योंकि पशु को बेचकर हम अच्छा कमा लेते हैं। पांच का पालकर 10 का बेच लेते हैं। यह आय मुख्यतः महिलाओं के श्रम पर ही टिकी हैं। घर में चाय, चीनी, कपड़ा-लत्ता, पढ़ाई, दवाई का खर्च भी घी दूध बेचकर हुई आय से ही होता है। वे कहते हैं – पशु सेवा ही उनकी पूजा है, वे बकरी, भैंस, गाय पालते हैं। जिसके पास जितने ज्यादा पशु हैं वे उतना ही अधिक सम्पन्न है। गांव में व्यक्ति की समृद्धि का द्योतक पशु की संख्या है। खेती से हमें ज्यादा आय

नहीं होती, परन्तु घर में अनाज भरपूर रहता है। खेती का पैसा डीजल, ट्रेक्टर, खाद इत्यादि में ही लग जाता है, फिर भी जो अनाज बचता है वह बाहर के व्यापारी आकर खरीद लेते हैं। इसका श्रेय वे पानी को देते हैं, जब पानी न था तब इनका स्तर भी बहुत ही नीचा था। बेचने के लिए अनाज नहीं बचता था और पानी ढोने से औरत को फुर्सत न होने के कारण खेतों में उनका काम करना असम्भव था, अतः समय पर बुआयी, निराई नहीं हो पाती थी और फसल भी कम होती थी। आज औरत बराबर की मददगार है, अतः खेती का काम समय से हो जाता है।

इस गांव के लोग अपने पशुओं, खेतों एवं कुओं तथा वृक्षों के प्रति बेहद निष्ठावान हैं। वे इन्हें अपने इष्ट देव सरीखे समझते हैं। दीपावली पर ये अपने कुएं और इंजन पर लक्ष्मी पूजन करते हैं, ठीक उसी तरह जैसे बनिया अपनी तिजोरी की पूजा करता है। गोवर्धन के दिन अपने पशुओं को विभिन्न परिधानों से शृंगार करके उनका स्वांग रचाते हैं और उनकी पूजा करते हैं। बछड़े और बैल की पूजा इस भावना से करते हैं, कि उनके खेती समृद्ध हो। प्रति माह पहाड़ों से आने वाले बर्तरी नाले, नरायणी माता नांगला, बरूआ नाला और पाण्डुपोल को देवता मानकर पूजा करते हैं। पाताल भैंरूजी की पूजा इस भावना से करते हैं, कि पानी की पूर्ति बनी रहे। गेहूं की पहली सिंचाई के लिए यह विशेष तौर पर की जाती है। शनिवार को पांच आदमी कुएं पर पाताल भैंरूजी की स्थापना करते हैं। लौंग, बताशा, बाटी बाकड़ा, गेहूं या मक्के की घूघरी अथवा गुड़ का प्रसाद लगाते हैं। ग्रामीण इसे अन्ध-विश्वास नहीं मानते बल्कि वे वास्तव में श्रद्धा रखते हैं और मानते हैं कि ऐसा करने से वरुण देवता प्रसन्न रहेंगे और उनकी खेती कभी नहीं सूखेगी। गेहूं की पैदावार अच्छी होगी। वे खुशहाल होंगे।

इसी तरह वृक्षों में उनकी पूर्ण आस्था है। वे वृक्षों को काटना बुरा समझते हैं। अलग-अलग गोत्र के लोग अलग-अलग वृक्षों को अपना इष्ट देव

मानकर पूजा करते हैं। दरअसल ये लोग एक-एक तरह के वृक्ष का वरण कर लेते हैं और उनकी देखभाल करने का बीड़ा उठाना है। पेड़ों की रक्षा की प्रथा इनके यहां सदियों से चली आ रही है। शादी विवाह एवं त्योंहारों पर ये इन्हें रोली, चावल, मोली, फूल, फल, प्रसाद चढ़ाकर सर झुकाते हैं। वृक्षों को ये अनेक रीति-रिवाज से इसलिये जोड़ते हैं ताकि इनकी रक्षा हो सके। इन वृक्षों में प्रमुख हैं – कदम्ब, नीम, खेजड़ा, आंवला, पीपल इत्यादि। होली, दीपावली जैसे त्योंहारों पर सेठा लेकर भैरूजी पंचपीर देवता की पूजा करते हैं। पूजा के दौरान ये मोली अथवा सूत चढ़ाते हैं और प्रार्थना करते हैं, कि घर-परिवार आबाद हो। गाँव वाले खेतों में विचरण करने वाले पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े सबको शीश नम करते हैं। रक्षाबंधन के बाद गूगा नौमी आती है। इस दिन ये लोग मिट्टी का गूगा बना कर उस पर अपनी राखी चढ़ाते हैं और नाग देवता की पूजा करते हैं ताकि वे उनकी रक्षा करें। पेड़ों के रक्षाबंधन जैसी कोई प्रथा इनके यहां प्रचलित नहीं है। इनके यहां धराड़ी प्रथा प्रचलित है। जिसके अन्तर्गत कुछ वृक्षों की ये पूर्ण रखवाली करते हैं और उन्हें किसी भी कीमत पर काटने अथवा नुकसान पहुंचाने को राजी नहीं हैं। यदि ये राखी गूंगा पर नहीं चढ़ा पाते तो पेड़ों की जड़ के पास चढ़ाते हैं, ये उसे इधर-उधर नहीं फेंकते न ही पत्थरों पर डालते हैं अतः यह भी राखी और पेड़ों के प्रति निष्ठा प्रतीक है। कुछ वनस्पति ऐसी हैं जिनका प्रयोग ये लोग औषधि के रूप में करते हैं। पीले फूलों वाली रोकड़ी ऐसी जड़ी-बूटी है जो कट जाने पर हो रहे रक्त-स्त्राव पर लगाने से स्त्राव रुक जाता है, नीम की पत्तियों का प्रयोग फोड़े-फुंसियों के लिए किया जाता है और पशुओं में गर्मी पैदा करने के लिए उन्हें बबूल का सेवन कराया जाता है। ये सब कुछ वहां के स्थानीय जंगलों में उपलब्ध हैं और इनकों नुकसान पहुंचाने के स्थान पर बचाने का प्रयास किया जाता है, पेड़ों की रक्षा करना गांव की पुरानी परिपाटी है, जिसे गांव वाले कायम रखने को तैयार हैं। इसमें तरुण भारत संघ की भूमिका को भी वे स्वीकार करते हैं। उनका कहना है कि संघ वालों ने उदाहरण के माध्यम से पेड़ को राखी

बांधकर पेड़ की रक्षा का संकल्प लेने को कहा था, जो लोगों के दिमाग में बैठ गई है और वे लोग पेड़ की रक्षा को राखी से जोड़ने लगे हैं। गांव वाले अपने अतीत में जाकर याद करने लगते हैं कि वे तो बहुत पहले से ही पेड़ों की रक्षा करते आ रहे हैं। हां, पहले से पेड़ को राखी बांधने जैसी कोई प्रथा तो नहीं थी। अब इतना जरूर हुआ है कि लोग पेड़ों के प्रति अधिक उदार हुए हैं। उनकी रखवाली करना अपना कर्त्तव्य समझने लगे हैं और उनको पनपने देने के लिए प्रयास करते हैं। एक बार फिर पेड़ों की लोकप्रियता बढ़ी है। उसकी उपयोगिता की ओर ध्यान गया है।

यहां के लोग संघ वालों का धन्यवाद करते हैं, कि इन्होंने ग्रामीणों में जागृति का शंखनाद किया है। यहां चेतना बढ़ी है। महिलाएं जागरूक हुई हैं। घर-घर में पढ़ाई-लिखाई, खेती-बाड़ी, भाईचारा, पशु प्रेम, सरकारी कामकाज में लापरवाही की भर्त्सना, स्वास्थ एवं सफाई की ओर रुचि जागृत हुई है। बाल-विवाह का भी सफाया हुआ है। लोग शिकायत के डर से बाल-विवाह करने में घबराते हैं। गांव में प्रत्येक किलोमीटर पर पाठशाला है जहां लड़के-लड़कियां शिक्षा ग्रहण करते हैं। इस गांव के विद्यार्थी जयपुर, दौसा तक पढ़ने जाते हैं। स्कूल में सभी जाति के बच्चे एक साथ पढ़ते हैं। स्कूल में जाति-भेद नहीं है।

इस गांव में पढ़ी-लिखी पर्दानशीन बहू से मिलकर एक सुखद अनुभूति हुई। ऐसा लगा कि उसे गांव में रहने का कोई अफसोस नहीं है और न ही नौकरी न करने का अफसोस साथ ही पर्दे में रहने का भी अफसोस नहीं है। वह तो खेती करके बहुत ही खुश है। उसे इस बात की पूरी जानकारी है, कि किस मौसम में कौन सी फसल बोना है, काटना है, पानी कब देना है, डीजल क्या भाव बिकता है, ट्रेक्टर का कितना किराया है इत्यादि, सभी प्रकार की जानकारी है उसको। इतना ही नहीं स्वयं भी खेत पर काम करती है। फावड़ा चलाती है, पानी पाटती है। पम्प चलाती है इत्यादि। उसे इस

बात का अफसोस है कि लड़कियों की पढ़ाई के प्रति गांव में थोड़ी उदासीनता है। फिर भी 4-5 वर्ष की जो लड़कियां हैं, उन्हें पढ़ाने में लोगों की रुचि है। दरअसल जो लड़कियां 10-11 वर्ष की हो गई हैं। वे परिवार के लिए उपयोगी हो गई हैं। वे घर का काम निपटाती हैं। उनकी मां खेतों में जाती हैं। उन लड़कियों का कहना है, कि पहले से पढ़ रहे होते तो ठीक था, अब घर के काम में मन लगता है और पढ़ने में शरम आती है। पढ़ी-लिखी बहू उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित करती है तो उसे यही जवाब मिलता है कि जितना तुम्हें मालूम है हमें भी मालूम है, तुम खेती करती हो हम भी करते हैं। तुम बर्तन मांजती हो, हम भी मांजते हैं, जब पढ़-लिखकर यही करना है तो फिर पढ़ना क्यों ? कौन-सा तुम नौकरी कर रही हो इत्यादि। वास्तव में इन लड़कियों की माताएं आदर की पात्रा हैं। जिन्होंने अपनी लड़कियों में इतना आत्मविश्वास भर दिया है कि वे अनपढ़ होने के बाद भी पढ़े-लिखे लोगों से टक्कर ले सकती हैं। यह उनकी सबलता का परिचायक है। बावजूदत उसके वह सन्तुष्ट है कि वह अपनी पारिवारिक जिम्मेवारी बखूबी निभा रही है।

गांव में आज भी बड़ी-बूढ़ी औरतों का आदर-सम्मान है। बहुएं उनकी सेवा करती हैं और उनके आदेश का पालन करती हैं। बहुएं सास के समकक्ष चारपाई पर नहीं बैठती हैं। घर में उनकी ही चलती है। उनके तजुर्बे का लाभ सभी लेते हैं, बच्चे पैदा कराने में उनकी अहम् भूमिका रहती है। सम्मिलित परिवार हैं। औरतें मर्यादा के लिहाज से ससुर, जेठ से पर्दा करती हैं, लेकिन मौका पड़ने पर वे जेठ, सास, ससुर को गाली देने में भी पीछे नहीं रहती हैं। वे बराबरी से उनका सामना करती हैं। यदि उनकी इच्छा के विपरीत कार्य होता है तो वे चुप नहीं बैठती हैं। शोर मचाती हैं। गांव के पुरुष-स्त्री पर जोखिम भरे काम नहीं देते, रात में रखवाली के लिए वे अपने लिए पाल बनाते हैं। औरतें खेती करती हैं, डूंगर में जाती हैं, पति का खाना-पीना पहुंचाती हैं और अवांछनीय तत्त्वों से उनकी रक्षा करते हैं। वे उनका आदर

करते हैं। महिलाओं से उतना ही कार्य कराते हैं जितना उनके वश में है। आज ये महिलाएं पिछले समाज को देखते हुए अपने को काफी शक्तिशाली समझती हैं।

गांव के लोग इस बात को भली प्रकार समझ रहे हैं, कि उनके गांव में सम्पन्नता का एक बहुत बड़ा कारण तरुण भारत संघ है। महिलाएं इस बात को स्वीकार करती हैं, कि संघ ने उन्हें पानी के प्रति जागरूक तो किया ही है, यह चेतना भी भरी है कि पेड़, पौधों, जंगल, जानवर और खेतों की रक्षा करके ही गांव को समृद्ध बनाया जा सकता है। गांव के लोग आज मांग कर रहे हैं, कि खेती में डीजल इंजन और ट्रेक्टर के प्रवेश ने उनके काम का बोझ घटाया है, उनके पास समय बचा है अतः उन्हें रोजगार दिया जाए। इस हेतु भी वे तरुण भारत संघ की ओर निगाहें लगाए बैठे हैं। वे रोजगार तो करना चाहते हैं, लेकिन अपने बल पर नहीं, यदि अन्य किसी संस्था या व्यक्ति या सरकार या संघ ने आकर कुछ कर दिया तो वे उसमें मिल जायेंगे, लेकिन रोजगार शुरू करने का साहस उनमें नहीं है। वे चाहते हैं कि संघ वालों ने जब उनके लिए इतना कुछ किया हो तो थोड़ा और कर दें। कलावती का घरवाला दिल्ली में मजदूरी करता है, वह गोपालपुरा से दिल्ली आती-जाती रहती है। वह गांव की जिन्दगी को बहुत अच्छा मानती है, शहरवालों से गांव वालों को अच्छा मानती है, बावजूद इसके कि शहर में गावं की तुलना में ज्यादा सुविधाएं हैं। अपने अनुभव के आधार पर वह कहती हैं "शहर वालों से हम अमीर हैं। हमारे कपड़े उनके जैसे नहीं है, फिर भी हम अच्छे हैं। यहां हम एक भूखे को उधार पर भी खिलाते हैं, जब होगा दे देंगे। हमारे गांव में कोई भूखा नहीं सोता। अगर हमें बाजरे की खिचड़ी खानी और बाजरा घर में नहीं है तो हम पड़ौसी को गेहू देकर बाजरा ले आते हैं। शहरों में कोई किसी को नहीं पूछता, बहुत अकेलापन है। यहां हमें पानी कुएं से लाना होता है, बरसात में कीचड़ में घड़े फूटते हैं, पर हम शहर से अच्छे हैं।" वे शहर में गांव की आत्मीयता ढूंढती हैं। यहां रोजगार

हो जाए तो हम कहीं नहीं जाएंगे। हमारा कुनबा यहीं है। हम सब शादी-विवाह में इकट्ठे होते हैं। हमें आनन्द आता है। गांव में दहेज भी नहीं मांगते। बाल-विवाह भी बन्द हो गए हैं, शिकायत के डर से सब घबराते हैं। संघ वालों को रोजगार के लिए कुछ करना चाहिए। गांव वालों को शहर रास नहीं आता।

गोपालपुर अपने में एक सम्पूर्ण गांव है। जहां लोगों को शिक्षा, खेती, पशु, बाजार, चारे के लिए चिन्ता नहीं करनी पड़ती। भरपूर पानी है तो खेती, पशु और घर के लिए पर्याप्त है। औरतों के जीवन में पानी का महत्त्व इस गांव में साफ देखने को मिलता है। वे स्वीकार करती हैं कि पानी के कारण खेत में फसल है, जंगल में चारा है। घर में राशन है। उनके पशु को खाने-पीने के लिए पर्याप्त चारा मिलता है। अनाज, घी तथा पशुओं को बिक्री से पर्याप्त आय है, जिसका प्रयोग, शादी-विवाह एवं अन्य समारोहों में होने लगा है। यदि उन्हें कष्ट है तो केवल इस बात का है कि पीने का पानी दूर कुएं से भर कर लाना पड़ता है और बरसात में कीचड़ के कारण मटकों की टूट-फूट अधिक होती है, लेकिन बावजूद इसके वे मिट्टी का ही मटका पसन्द करती हैं, प्लास्टिक अथवा स्टील का नहीं। उनका कहना है कि उनके पास इतना पैसा है कि वे मिट्टी के मटके खरीद सकें। जो उनकी सम्पन्नता दर्शाता है।

मालूताना

एक छोटा से कस्बा जहां हम एक चाय वाले की दुकान पर रुके। यह दुकान काफी पुरानी है। चाय वाला रोशन सिंह 17 साल का है, लेकिन उसके पहले उसके काका इस दुकान को चलाते थे। जैसा कि सभी जगह चाय की दुकानों पर आस-पास के लोगों का जमावड़ा होता है, यहां भी था। कुछ वृद्ध बुर्जुर्ग बैठे हुए गुप्त-गूं कर रहे थे।

दुकान पर बैठे एक बुजुर्ग ने बताया कि गांव का हाल बहुत बुरा है। आज गांव सूखे की चपेट में है। बारिश का नामोनिशान नहीं है। आज एक चौथाई जमीन पर ही खेती हो रही है, बाकी जमीन खाली पड़ी है। पहले 11 जोहड़ गांव के थे, संघ वालों ने 20 और जोहड़ बनवाये। तीन साल पहले गांव में बहुत अच्छी खेतीबाड़ी हुई थी। सब बहुत खुशहाल हुए। आमद भी काफी अच्छी हुई, ऐसा विचार मन में भी नहीं आया था कि सूखा पड़ जाएगा और इतनी भयानक स्थिति आ जाएगी। काफी वर्षों के बाद किसान के घर में खुशहाली आयी थी, इसलिए सबने अपनी आमदनी खेत, भेंड़, डोल और शादी विवाह में लगा दिया। लड़कियां और बहुओं को अच्छे जेवर दिए खूब खाना-पीना किया, लेकिन इस सूखे ने हमें तोड़ दिया, अब इतना पैसा भी नहीं है कि इंजन, ट्रेक्टर में लगाएं। उस समय इस विपदा की कल्पना भी नहीं की थी, गांव वालों ने और सब खर्च कर दिए, अब तो हाल बहुत ही बुरा है। तरुण भारत संघ से जो आराम मिला था उसका हमने सदुपयोग नहीं किया। इसके विपरीत चाय वाले के चेहरे पर आत्मसन्तोष की झलक साफ दिखाई दे रही थी। वह अपने काका की तुलना में ज्यादा कमाता है। गांव में पड़े सूखे का असर उसकी दुकान पर नहीं है। उसकी आमदनी पूर्ववत् है। उसकी दुकान पर चाय पीने वालों में वे लोग हैं जो मेहनत-मजदूरी करते हैं या पशुपालन करते हैं। इनकी आमदनी में कमी नहीं हुई है। कुछ लोग बाहर गांव से कमाकर लाए हैं, उनके पास भी पैसा है। दूध देने वाले उधार पीते हैं और महीने में दूध के पैसे में कटा देते हैं। मजदूर भी उधार पी लेते हैं, मजदूरी मिलने पर दे देते हैं। मजदूरी में अच्छी कमाई है। पुरुष को 150-200 रु. तक मिलते हैं, औरतें पत्थर तोड़ने का काम करती हैं, उन्हें 100-125 रुपये तक की प्रतिदिन मजदूरी मिल जाती है, इसलिए उसकी चाय बिकती रहती है। गूजर लोग मासिक मीटिंग करते हैं, तो एक ही दिन में 50-60 कप बिक जाती है। चाय वाले की आमदनी भले कम न हुई हो पर गांव में किसान हाहाकार कर रहा है। आज उसे अपनी अदूरदर्शिता पर पश्चाताप है। वे इस बात को

समझ रहे हैं, कि समय रहते उन्होंने अपने जंगल और पानी को नहीं बचाया। अब पछताये होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत।

मालियों की ढाणी

नजारा ही बिल्कुल अलग था। बेहद उत्साह था समूह की औरतों में। शहर की महिलायें जैसे किट्टी पार्टी करती हैं पैसे इकट्ठे करती हैं वैसे ही समूह की महिलायें मासिक बचत के पैसे इकट्ठे करती हैं। बचत के लिये महिलायें इतनी उत्सुक थी, कि आटा पीसने का काम स्वयं कर लेती हैं और पिसाई के बचे पैसे को समूह में जमा करती हैं। बचत के पैसे से ये लोग जेवर बनवाती हैं। पीहर और ससुराल दोनों पक्ष गहना देने की इच्छा रखते हैं। खेती में सूखा पड़ने के कारण समूह के माध्यम से बचत योजना चल रही है जिसकी शुरूआत तरुण भारत संघ ने की है। औरतें बेहद खुश हैं। औरतों को गहने का ज्यादा शौक होता है अत: अपनी इस बचत में वे पूरी दिलचस्पी रखती हैं। समूह में अधिक से अधिक महिलाओं को शामिल करने का प्रयास करती हैं। गहना महिला के अधिकार की वस्तु है, जिससे वह अपने को सुरक्षित और सबल महसूस करती हैं।

थानागाजी

राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय थानागाजी में 350 लड़कियाँ पढ़ती हैं। वहाँ की टीचरें अपनी छात्राओं से बेहद खुश हैं। उनका कहना है, कि लड़कियाँ बहुत ही संस्कारवान हैं माँ बाप लड़कियों की शिक्षा पर पूरा ध्यान देते हैं। अधिकतर बच्चों के पिता नौकरी पेशे अथवा दुकान वाले हैं, खेती वाले कम हैं। लेकिन इनकी दुकान के खरीददार खेत वाले हैं। गाँव से खरीददारी करने शहर तक

आते हैं। इनकी दुकान में आमदनी का जरिया ये किसान ही हैं। चूंकि किसानों की आय बढ़ी है, इसलिये वे शादी विवाह, दान दहेज का सामान यहाँ आकर खरीदते हैं। इनकी लड़कियाँ यहाँ तक पढ़ने के लिये भी आती हैं। लड़कियों के माता पिता उनकी पढ़ाई में पूरी रूचि रखते हैं यद्यपि वे स्कूल उनकी टीचर से मिलने नहीं आते हैं, फिर भी यदि टीचर कुछ लिखकर भेजती हैं तो उस पर पूरा अमल करते हैं। छात्राओं की मातायें स्वयं भी लिख कर भेजती है, कि "मैडम यह थोड़ा कम ध्यान पढ़ाई में देती हैं"। टीचरों ने बताया कि सीनियर विद्यालय हो जाने के कारण गाँव की लड़कियाँ भी पढ़ने आती हैं। इन लड़कियों के अभिभावक इन पर खर्च करने में कोताही नहीं बरतते यदि टीचर हस्तकला इत्यादि के लिये 2-4-6 रूपये मांगती हैं तो वे सहर्ष देते हैं। पढ़ाई का प्रचलन दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है थानागाजी की लड़कियाँ अलवर तक पढ़ने जाती हैं। टीचर कहती हैं भले ही सूखा पड़ा हो लेकिन बच्चों पर खर्च करने के लिये माता पिता कुछ नहीं सोचते। हम लोगों को तो इसका आभास तक नहीं होता कि सूखा पड़ा है। क्योंकि बच्चे पूरी यूनिफार्म, रिबन, जूते पहन कर आते हैं। कापी किताबें पूरी लाते हैं। माता-पिता लड़के लड़कियों में भेद नहीं करते हैं वे कहते हैं मेहनत की कमाई का पैसा बच्चों पर खर्च नहीं करेंगे तो बच्चे नालायक होंगे।

इसी स्कूल से 12वीं पास 20 वर्षीय निरंजन शर्मा में बहुत आत्म विश्वास है वह नौकरी करना चाहती है ताकि अपने पिता को आर्थिक सहायता दे सके और अपनी मर्जी से खर्च कर सके।

तात्पर्य यह है कि गाँव में लड़कियों की शिक्षा और नौकरी के प्रति उत्साह है। इस उत्साह का कारण गरीबी नहीं बल्कि खुशहाली है। खेती की खुशहाली शहर की खुशहाली खेती की तंगी शहर में तंगी ।

थानागाजी या किशोरी अस्पताल

यहाँ के जिला अस्पताल का मुआयना किया। यहाँ मुख्य महिला डाक्टर से मुलाकात हुई। उन्होंने बताया कि आज गाँव में पहले की तुलना में जागरूकता बढ़ी है। लोग इलाज कराने आने लगे हैं। दरअसल सबको काम पर जाने की चिन्ता रहती है अत: दवा लेकर ठीक हो जाना चाहते हैं। मरीज मुफ्त दवा तो लेते ही हैं, खरीदकर भी खाते हैं। लोगों में नसबन्दी और टीका लगवाने की उत्सुकता बढ़ी है। औरतें बच्चों की पोलियो ड्राप्स इत्यादि दिलाने में रूचि रखती हैं। महिलाओं ने बच्चों का रख रखाव भी अच्छी तरह करना शुरू कर दिया है इससे बच्चों में विकलांगता घटी है। आज पहले की तुलना में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता आयी है।

औरतों में ज्यादातर अनीमिया बीमारी मिलती है इसका कारण उनकी खुराक है। डाक्टर का कहना है कि उनके घर में अनाज भोजन की हरी सब्जी की कमी नहीं है कमी है तो जानकारी की और अज्ञानतावश ही वे लोग नहीं खाती हैं और रोग का शिकार होती हैं। ज्यादातर महिलायें रोग बिगड़ने के बाद अस्पताल आती हैं लेकिन फिर भी काफी जागरूकता बढ़ी है और समय से अस्पताल आने लगी है। नसबन्दी में भी उनकी रूचि बढ़ी है उन्हें यह भली प्रकार समझ आ रहा है, कि उनके जितने ज्यादा बच्चे होंगे उतने टुकड़ों में जमीन बंट जायेगी। पहले ही यह आकार में काफी छोटी हो गयी है। इस भय से वे नसबन्दी में रूचि रखती हैं।

डाक्टर का कहना है कि अवश्य ही खेती में मुनाफा बढ़ा है तभी इनकी पाकेट में पैसा भी आया है। साथ ही इनके पास समय भी बचा है नहीं तो इनको फुर्सत कहाँ थी इतनी दूर दवा लेने आने की। ट्रैक्टर से आने जाने की सुविधा है। खेती की चिन्ता नहीं है, इसलिये दवा लेने आ जाते हैं।

इतना ही नहीं अब तो वे मरीज का प्राथमिक उपचार भी स्वयं ही करके लाते हैं। थानागाजी का स्कूल और अस्पताल दोनों इस बात को स्वीकार करता है कि आसपास के गाँवों से बच्चे और मरीज यहाँ आते हैं। भले ही तरूण भारत संघ ने थानागाजी में कोई काम नहीं किया है लेकिन उन गाँवों में तो जंगल, पानी का कार्य किया ही जहाँ से बच्चे और मरीज तो आते ही हैं। शादी विवाह की खरीददारी के लिये भी किसान थाना गाजी आते हैं। यह सब तरूण भारत संघ के द्वारा किये गये पानी के काम का अप्रत्यक्ष प्रभाव है। चूंकि पानी के काम के बाद ग्रामीणों की आय बढ़ी और वे थाना गाजी उस आय को खर्च करने के लिये आते हैं। कुल मिलाकर खेती में आये सुधार और विकास तथा जागरूकता ने महिलाओं को भी जागरूक बना दिया है। लड़कियाँ पढ़ने लगी हैं। स्वास्थ्य के प्रति भी सचेत हुई हैं।

बनजारों की ढाणी

आभूषणों से सुसज्जित हृष्ट पुष्ट शरीर वाली बंजारा महिलाओं को देखकर यह अनुमान लगाना कि ऊपर से इतनी खूबसूरत दिखने वाली महिलायें अन्दर से तनिक भी दुखी हो सकती हैं बहुत मुश्किल काम है। इनके रंग-बिरंगे कपड़े जिनमें शीशे जड़े हैं और सर से नख तक के आभूषण अपनी ओर आकर्षित किये बिना किसी को भी नहीं छोड़ते। मरूस्थल में खड़ी एक महिला किसी अप्सरा से कम नहीं लगती है। लेकिन हमारा भ्रम उस समय चकनाचूर हो गया जब हम उनके समीप पहुँचे और उनसे बातचीत की। उनकी झोंपड़ी में गये उनके बच्चों को देखा। उनकी स्थिति को देखकर आँखे अपने आप नम हो गयी और समझ में आया कि यह तो मात्र आवरण है। जो ऊपर से देखने में भड़कीले दिखते हैं, पर अन्दर की कहानी काफी दर्दनाक है। बिल्कुल वैसा हाल है ऊँची दुकान में फीके पकवान।

वास्तव में इनकी ढाणी तक पहुँचना अपने आप में एक अभियान है। सड़क के नाम पर पैदल चलने वालों के पैरों से बनी पगडंडी है। अगल-बगल बालू के टीले या फिर रेतीले मरूस्थल। हमारा जीप ड्राइवर भी काफी साहसी था वह उन पगडन्डियों के सहारे-सहारे ऊँची-नीची जमीन पर उतारते-चढ़ाते जीप को बंजारों की ठाणी तक ले जाने में सफल हो गया। ठाणी में जीप पहुँचते ही औरतें और बच्चे बिल्कुल अचम्भित हो गये और बिखरे हुए अपने सगे संबंधियों को आवाज देकर बुलाने लगे। मानों ठाणी में कोई अजूबा आ गया हो। देखते-देखते 30-32 महिलाओं की भीड़ लग गयी।

औरतों से पहले ही उनके बच्चे हमारे आगे पीछे झुण्ड बनाकर खड़े हो गये और पूछने लगे हम उनके लिये क्या लाये हैं ? हम उन्हें क्या देंगे ? उनकी मातायें जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाकर हमारी तरफ आ रही थीं। उनके लंहगे में लगे शीशे और तन पर पहने गहने दूर से बहुत चमक रहे थे। हम यह अनुमान नहीं लगा सके कि ये गहने असली हैं या नकली। दूर से झिलमिल करके आती ये महिलाएँ काफी खूबसूरत लग रही थी वास्तव में उनके नाक नक्श भी खूबसूरत थे और चेहरे पर गोदने के निशान उनकी खूबसूरती में चार चांद लगा रहे थे। दांतों में काली मिस्सी भरी थी, दांतों के ऊपर भी सुनहले और रूपहले निशान लगे थे। जब वे मुँह खोलती थीं तो दांतों से भी एक चमक बिखरती थी ऐसा प्रतीत हो रहा था कि ये महिलायें हमसे मिलने की सूचना पहले ही पा चुकी हैं और सज-संवर कर हमारे स्वागत का बेताबी से इन्तजार कर रही हों पर ऐसा कुछ भी नहीं था वे अपने सामान्य पहनावे में थीं।

हम उनके लिए तो अजूबा थे ही वे भी हमें अजूबा ही नजर आयीं। क्योंकि एक तो नख से शिख तक की सजावट दूसरे उनकी संख्या तकरीबन 30-32 रही होगी और पुरूषों के नाम पर एक भी नहीं केवल एक बूढ़े बाबा

वहाँ मौजूद थे। हमें उन्होंने चारपाई पर बैठाया और स्वयं नीचे जमीन पर एक सूमह में बैठ गयीं। लगभग सभी के गोद में छोटे बच्चे थे जो उनका दूध पी रहे थे। बच्चों की दशा दयनीय थी। तकरीबन सभी बच्चे अर्धनिद्रा में थे जैसे कोई नशीली चीज खा रखी हो। उनके शरीर पर मैल की परत जमी हुयी थी और कपड़े भी मैले कुचैले थे। उन्होंने स्वयं बताया वे बच्चों को रात में सोने के लिए अफीम खिलाती हैं। यह उसकी ही गहल है। वे कहती हैं गहल में बच्चे कम तंग करते हैं। उन्हें भूख प्यास भी कम लगती है। उन्होंने समझा कि हम सरकार की तरफ से आये हैं और उनको कुछ देकर जायेंगे और उन्होंने माँग की बौछार लगा दी। हमने उन्हें समझाया मांगने से क्या होगा तुम सब खुद कुछ करो अपने कमाई के भरोसे ही अपना जीवन चलता है लेने से नहीं। इतना सुनकर वे बिफर पड़ीं हम क्या करें ? उन्होंने अपने हाथ खेतों की ओर करके हमें दिखाया वो देखो हमारे खेत में हमने चना बोया था सब जल गया पानी है ही नहीं। हमने खेत की ओर नजर की तो देखा एक बूढ़ी औरत वहाँ बैठकर आवाज लगा रही थी और खेत में जुताई की लाइने तो दिखाई दे रही थी लेकिन पौधे नहीं थे। यह साफ दिखाई दे रहा था कि पानी के अभाव में बीज जमे ही नहीं है और वह बुढ़िया भी बच्चों को आवाज देकर कह रही थी कि उसे थोड़ा पानी वहीं ले जाकर पिला दें क्योंकि उससे प्यास के मारे चला नहीं जा रहा है। वहाँ का हाहाकार देखकर हमारे पैरों के नीचे से धरती खिसकती महसूस हुयी वास्तव में हमें ऐसी त्राहि कहीं भी देखने को नहीं मिली। पानी का अभाव इतना पीड़ादायक है हमें भी यह पहली बार समझ में आया।

दुखियारी औरतों की आँखों में आंसू आ गया आप बीती सुनाने में। बिलखते हुए उन्होंने बताया कि हमने अपना सारा पैसा इस जमीन को खरीदने में लगा दिया और इससे पहले हम घूम-घूमकर अपना जीवन व्यतीत करते थे। कहीं भी पड़ाव डाल लेते थे। लेकिन लश्कर लेकर घूमते-घूमते हम थक गये थे इसलिये हमारे बुर्जुग ने निर्णय लिया कि

अब एक ठिकाना बना लिया जाय। अभी स्थिति ये है कि हम सब एक ही खानदान की हैं ओर जो परिवार का बुर्जुग है वह हमारे साथ रहता है। हमारे सबके घरवाले बाहर कमाने गये हैं । महीने दो महीने से सबके घरवाले आते रहते हैं। एक साथ नहीं बारी-बारी से आते हैं। बाकी समय हमारी रखवाली के लिये यह बुढ्ढा रहता है। हमें सारा सामान खरीद कर लाना होता है । दुकान तक जाने में हमारे पाँव टूट जाते हैं। सड़क है नहीं सवारी यहाँ तक आती नहीं पैदल भागते जाना होता है, भागते आना होता है। सुबह निकलो तो मुश्किल से शाम तक घर पहुँच पाते हैं। जो थोड़ी बहुत सड़क दिख रही है वह हमने अपने घरवालों के साथ ही मिल कर करी है, जापे में भी हमें अस्पताल पैदल जल्दी-जल्दी चलकर जाना होता है हमें गोद लेकर कौन जायेगा ? पीने का पानी भी नहीं है दूर से ढोकर लाना होता है नीचे की ढाणी से लाते हैं। कितना लायेंगे खाना बनाने और पीने के लिये हो जाये वही बहुत है। हम तो खाली बाजरे की रोटी और चटनी पर जीते हैं पानी के बिना क्या खाना बनायेंगे। पता नहीं किसने बच्चों को पढ़ाने के लिए मास्टर भेजा है वह बच्चों को लेकर आता है थोड़ा पानी पिला दो हम कहाँ से पिलायें एक-एक चुल्लू पानी देते हैं अब उस बुढ़िया को कौन पानी पिलाये कहाँ से लायें पानी। हमने पेड़ लगाये हैं एक-एक घर में 10-10 पेड़ हैं ये भी पानी के बिना जल जायेंगे नीचे थोड़ा बरसाती पानी इकट्ठा था वही डालते थे । अब तो वह भी खत्म हो गया है उसकी मिट्टी में कीड़े पड़ गये हैं फिर भी हम उसे लाकर काम में लेते हैं । अब हम इन पौधों को भी नहीं बचा सकेंगे। हम नहाते भी नहीं हैं, कपड़े भी नहीं धोते हम तो जानवर हैं, बार-बार ये औरतें अपने जन्म को धित्कारती हैं, भगवान ने हमें क्यों बनाया है ? हम गन्दे हैं हम अपने कपड़े नहीं धोते, देखो हमारे शरीर में कितना मैल है हम भगवान की पूजा क्या करें। उसने हमें इतना गन्दा बनाया है इत्यादि उनके मन का गुबार था भगवान के प्रति। वे मुझसे बार-बार आग्रह कर रही थीं

कि तुम क्या समझोगी हमारे दुख को, दो दिन यहां रहकर देखो ये छोटे-छोटे कुंडारे हैं इनमें हम बच्चों को डालकर छिल्ली गेर देते हैं पड़े रहते हैं ये उसमें। सबेरे इनको बिना दूध की काली चाय पिलाते हैं, कहाँ से लायें दूध इनके लिये ? अपने पशु भी नहीं पाल सकते क्योंकि पानी नहीं है वे भी मर जायेंगे। हमारे नसीब में काली चाय, बाजरे की रोटी और चटनी ही लिखी है। हमारे पास ज्यादा पैसा होता और यह मालूम होता कि यहाँ पानी नहीं है तो हम कभी भी ये जमीन नहीं खरीदते अब तो जो पैसा था वह भी खत्म हो गया इसी आसरे जी रहे हैं कि कभी कोई दयावान इधर आकर हमें देखेगा और सड़क पानी का इन्तजाम करेगा। नहीं आयेगा तो हम ऐसे ही मर जायेंगे हम तो कर नहीं सकते। हमारे मर्द बाहर कमाने न जायें तो हम बिल्कुल ही भूखे मर जायेंगे और हम सड़क और पानी बनायें या बच्चों की रोटी पानी बनायें। हम तो जानवर ही हैं, इत्यादि।

हमने उनसे पूछा तुम जानवर कैसे हो तुमने तो हमसे भी अच्छे और भड़कीले कपड़े पहने हैं। क्या ये जेवर चांदी के हैं तपाक से उत्तर मिला ना जी ये तो गिलट के हैं चाँदी के कहाँ से पहनूं इतना पैसा कहाँ से आयेगा और चाँदी पहनूगी तो लोग मार गेरेंगे। इन्हें ही बनाने में काफी पैसा लग जाता है इनको बिना पहने भी काम नहीं चलता क्योंकि हमारी बड़ी बूढ़ी ने हमें कहा है, कि तुम अपनी पहचान मत छोड़ना। सर से लेकर पैर तक जेवर पहनना हम उस बूढ़ी माता की बात मानकर इसे पहनते हैं और अपनी पहचान बनाकर रखते हैं हमारे मर्द को इसके लिये भी कमाना होता है।

बन्जारों की बस्ती में जाकर वास्तव में एहसास हुआ कि पानी की क्या उपयोगिता है। जब हम गोपालपुर, सूरतगढ़ और अन्य गाँवों की तुलना बंजारों की ढाणी से करते हैं तो दोनों में जमीन आसमान का अन्तर दिखाई

देता है। एक ओर सम्पन्नता और आशावादिता है तो दूसरी ओर विपन्नता और निराशावादिता है। वे स्वयं को पशु के दर्जे में रख रही हैं। वास्तव में पानी का अभाव एक औरत को शिथिल और मृतप्राय बना देता है। सूरतगढ़ और गोपालपुर की महिलायें अपने जीवन और बच्चों के जीवन को संवारने में लगी हैं तो बंजारने अपने बच्चों को स्वयं को दुत्कारने में लगी हैं, वे बार-बार अपने को ही कोसती हैं, कि जब भगवान ने पीने नहाने को पानी नहीं दिया तो हमें बनाया ही क्यों हैं ? हमारे जीवन का अस्तित्व ही क्या है। गोपालपुर की औरत पानी की उपलब्धि के कारण फुर्सत पाकर कुछ रोजगार करना चाहती है तो बंजारने पानी की अनुपलब्धि के कारण तरसती हैं, कि थोड़ा पानी मिल जाये तो हम भी चैन कर सकें। साफ कपड़े पहन सकें, बच्चों को नहला सकें इत्यादि। इस अध्ययन के दौरान मैंने कई गांव देखे और समझे विस्तार से मैंने दो ही गाँवों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। एक ओर है गोपालपुरा गांव जहाँ से तरूण भारत संघ का काम शुरू हुआ था दूसरी तरफ है थाना गाजी में बंजारों की ठाणी जिसमें तरूण भारत संघ आज तक भी नहीं पहुँच पाया है। गोपालपुरा में जाकर महिलाओं की सरलता, सहजता व सादगी तथा उनके जीवन का उत्साह तथा जीवन पद्धति की लय देखी और कुछ करने की लालसा वहीं दूसरी ओर बंजारों की ठाणी में दिखावा और भड़कीलापन लेकिन जीवन की पूर्ण निराशा और उस निराशा में मांगने के अलावा कुछ भी करने के प्रति अविश्वास। यह इतना बड़ा अन्तर्द्वन्द समाज में सिर्फ छोटे-छोटे काम करके मिटाया जा सकता है। महिला का सशक्तिकरण मात्र रूपया कमाने से नहीं हो जाता बल्कि उसको घरेलू सुविधायें देने, उसके घर में पर्याप्त अनाज होने, बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य की व्यवस्था होने से भी हो जाता है, क्योंकि महिला भी इसीलिए कमाती है, कि वह अपने बच्चों और अपने पति तथा स्वयं के लिए साधन जुटा सके। जब समाज उसे घर बैठे ही सुविधायें प्रदान कर देता है, तो वह अपने-आप सशक्त हो जाती है। इन सुविधाओं में से एक सुविधा पानी है। जिनकी पर्याप्त पूर्ति महिला को सशक्त बनाती है अन्यथा

वह पानी के लिए दर-दर भटकती है। और पैसे से सशक्त होते हुए भी दुर्बल बनी रहती है।

गोपालपुरा और सूरतगढ़ जैसे गाँव जहाँ तरूण भारत संघ का कार्य हुआ है, वहाँ के लोगों के सहयोग से हुआ है उनसे ज्यादा पानी के अभाव के मर्म को कोई दूसरा नहीं समझ सकता है। जहाँ कहीं भी संघ के सहयोग से कार्य हुआ है वहाँ के लोगों में यह भावना आनी चाहिए कि वे भी उन इलाकों में जाकर कार्य करें। उन लोगों को पानी बचाने के तरीके बतायें जहाँ पानी के बिना तबाही मची हुई है। अकेले न भी कर सकें तो तरूण भारत संघ के साथ मिलकर स्वेच्छा से निष्काम भाव से करें। तरूण भारत संघ जन-जन में इस कार्य को फैलाने की दृष्टि से तथा बंजारों की ठाणी जैसे पानी के अभाव से ग्रस्त गाँवों को दिखाने के लिए देव उठनी एकादशी से 'जल बचाओ, जोहड़ बनाओ' पद यात्रा शुरू करता है। इस पद यात्रा में शामिल होकर पानी के काम को बढ़ाने के इस संकल्प में मदद कर सकते हैं। यह यात्रा पन्द्रह दिन की होती है। इसके अलावा 'पेड़ बचाओ, पेड़ लगाओ' तथा बीज बचाओ के लिए की जाने वाली 11 दिन की पदयात्रा में शामिल होकर अपना सहयोग दे सकते हैं। जो कुछ हमें मिला है उसके वितरण में ही सुख है। खाने से ज्यादा खिलाने का सुख है।

एक महिला घर-परिवार और समाज को समर्पित होकर जो सुख महसूस करती है, वह स्वयं के लिए कर के नहीं। चूंकि वह मां है, वह पूरे परिवार को खिलाकर अन्त में स्वयं खाती है और यदि उसके पास खिलाने के लिए नहीं रहता तो वह असहाय और अबला हो जाती है। यदि समाज अबला को सबला बनाना चाहता है तो उसे छोटी-छोटी सुविधायें यथा पानी से नवाजें न कि ऊँची नौकरी से।

❑❑❑